THE YOGIC INSIGHT

Vol.: 1
Pp: 22-31

भारतीय दर्शन परम्परा में योगदर्शन का विशिष्ट स्थान

डा० गुणनिधि शर्मा

सारांश

भारतीय परम्परा में योग दर्शन को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। वेद, पुराण, उपनिषद्, आरण्यक ग्रन्थों से लेकर श्रीमद्भगवद्गीता तक सर्वत्र योगविद्या का अप्रतिम प्रभाव सहज ही दृष्टिगोचर होता है । न्याय-वैशेषिकादि षड्दर्शन सैद्धान्तिक मतभेद रखते हुए भी यौगिक प्रणाली को अंगीकार करते हैं। शङ्कराचार्य जैसे महान वेदान्ती साङ्ख्य के सिद्धान्तों का खण्डन करते हुए भी "....न शक्यते साहसमात्रेण प्रत्याख्यातुम् ।"कहकर योग का विरोध नहीं करते। प्रस्तुत शोध निबन्ध में योग की इसी विशिष्टता तथा इसके पीछे छिपे कारणों पर प्रकाश डाला गया है ।

****

संस्कृत–योग अध्यापक, राजकीय योग शिक्षा एवं स्वास्थ्य महाविद्यालय, चण्डीगढ

भूमिका

भारतीय दर्शनशास्त्र की परम्परा अत्यन्त पुरातन है। प्राचीनतम ग्रन्थों में इसके बीज यत्र -तत्र विकीर्ण रूप में प्राप्त होते हैं।इन्हीं दार्शनिक तत्त्वों ने भारतीय प्रज्ञा को सदा अनुसन्धान तथा आत्मसाक्षात्कार की ओर प्रेरित किया।

दर्शन

दर्शन शब्द की व्युत्पत्ति दर्शनार्थी दृश् धातु से भावार्थक ल्युट् प्रत्यय करके हुई है –**दृश्यते अनेन इति दर्शनम्** अर्थात् जिसके द्वारा देखा जाए उसे दर्शन कहते हैं। यह परिभाषा सुनते ही जो सर्वप्रथम प्रश्न मन में आते हैं वे हैं कि दर्शन विद्या में क्या देखा जाता है , कैसे देखा जाता है और क्यों देखा जाता है ? तो, यह समझ लेना चाहिए कि भारतीय दर्शनों के स्रष्टा ऋषि दर्शन के अध्येता से मात्र किसी बौद्धिक कसरत की अपेक्षा नहीं रखते वरन् मानवीय जीवन से सम्बद्ध सबसे महत्त्वपूर्ण तथा टेढे प्रश्नों के उत्तरों की अनुभवात्मक उपलब्धि चाहते हैं। वस्तुतः ऋषि पद की व्युत्पत्ति भी यही है --

ऋषिर्दर्शनात्।

अर्थात् जो परम तत्त्व का अपनी नग्न आखों से साक्षात्कार करे वह ऋषि है। अपने तथा अखिल ब्रह्माण्ड के सत् स्वरूप स्वरूप का साक्षात्कारिणी प्रज्ञा के द्वारा प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करके आत्मसाक्षात्कार अथवा आत्मोपलब्धि करना ही भारतीय दर्शनशास्त्र का लक्ष्य है।

दर्शन की षड् धाराएँ

सामग्री की दृष्टि से भारतीय दर्शनशास्त्र अत्यन्त समृद्ध हैं। वैदिक काल (३००० से ६००० ई.पू.) से लेकर आधुनिक काल पर्यन्त विशाल स्तर पर दार्शनिक सामग्री की रचना हुई। इन दर्शन धाराओं में मत-मतान्तर तथा विरोधाभासों को देखकर एकबारगी तो शोधार्थी का चित्त भ्रमित हो जाता है परन्तु गम्भीर अनुशीलन के उपरान्त समन्वय के सूत्र उसके हाथ लग ही जाते हैं।

भारतीय दर्शनों को मुख्यतया दो भागों में विभक्त किया गया है -आस्तिक दर्शन तथा नास्तिक दर्शन ।आस्तिक दर्शन श्रुतिमूलक हैं इसलिये उन्हें श्रौतदर्शन भी कहा जाता है।वे वेद को परम प्रमाण मानकर चलते हैं।न्याय-वैशेषिक , साङ्ख्य -योग , पूर्व-मीमांसा तथा उत्तर-मीमांसा-सङ्ख्या के आधार पर ये षड्दर्शन भी कहलाते हैं। कुछ आधुनिक विद्वान् सांख्य को **"ईश्वरासिद्धेः"**इस सांख्य-सूत्र के आधार पर नास्तिक दर्शनों में गिनते हैं परन्तु सांख्य के आविष्कारक महर्षि कपिल के सांख्य को पढने के बाद यह आशङ्का निर्मूल सिद्ध हो जाती है। बौद्ध-दर्शन , जैन-दर्शन तथा चार्वाक दर्शनादि को ईश्वर , वेद , तथा पुनर्जन्म में आस्था न

रखने से नास्तिक दर्शन माना जाता है । इसके अतिरिक्त अनेकानेक मत-मतान्तर तथा सम्प्रदाय हैं जो परस्पर वैचारिक मतभेद रखते हैं ।

न्याय दर्शन

इस दर्शन के प्रवर्तक ऋषि गौतम हैं। षड्दर्शनों में अतिशय महत्त्वपूर्ण **न्याय दर्शन** को तर्कविद्या अथवा वादविद्या भी कहा जाता है। ऐसा इसलिए , क्योंकि न्याय शास्त्रीय तर्कों के माध्यम से वस्तु की परीक्षा करता है । वात्स्यायन के अनुसार न्याय की परिभाषा है –

प्रमाणैरर्थपरीक्षणं न्यायः ।।1

अर्थात् न्यायदर्शन प्रत्यक्ष , अनुमान , उपमान तथा आगम प्रमाणों की सहायता से वस्तु अथवा तत्त्व का परीक्षण करता है । फलस्वरूप तर्क द्वारा तत्त्व के अनुसन्धान के लिए न्याय ने अद्भुत विचारप्रणाली की सृष्टि की । इसी लिए इस विद्या को सभी अन्य विद्याओं की प्रकाशक कहा जाता है

प्रदीपः सर्व विद्यानामुपायः सर्वकर्मणाम् ।
आश्रयः सर्वधर्माणां विद्योद्देशे प्रकीर्तिता ॥2

वैशेषिक

इस दर्शन के प्रवर्तक मुनि कणाद हैं । यह दर्शन न्याय से सम्बन्धित माना जाता है। अपने वास्तववाद तथा परमाणुवाद के कारण यह एक वैज्ञानिक दृष्टिकोणवाला दर्शन है । परमाणु का अर्थ है परम + अणुअर्थात्अत्यन्त सूक्ष्म कण । इस दर्शन के अनुसार सम्पूर्ण सृष्टि विभिन्न परमाणुओं से निर्मित है । विभिन्न तत्त्वों तथा पदार्थों का वैज्ञानिक अनुसन्धान करने से व्यक्ति ब्रह्माण्ड के सम्पूर्ण रहस्यों का साक्षात्कार करके मुक्ति प्राप्त कर सकता है । इस दर्शन का परम लक्ष्य धर्म की व्यापक व्याख्या करना है

यतोऽभ्युदयनिःश्रेयसिद्धिः स धर्मः ॥3

मीमांसा

मीमांसा का अर्थ है जिज्ञासा । इस दर्शन के सबसे प्रसिद्ध आचार्य जैमिनि हैं । यह दर्शन वेदों को अपौरुषेय मानता है । यह वेदों के विधिवाक्यों तथा यज्ञ - यागादि के विधान में छिपे हुए गूढार्थ की विवेचना करता है ।

वेदान्त अथवा उत्तरमीमांसा

यह दर्शन सभी दर्शनों में विशिष्ट स्थानरखताहै। वेदों के साररूपउत्कृष्टतम विचारों (जिन्हें उपनिषद् भी कहा जाता है) पर आधारित होने से इसे वेदान्त दर्शन भी कहा जाता है । महर्षि बादरायण व्यास रचित ब्रह्मसूत्र इस दर्शन का सर्वप्रमुख ग्रन्थ है । आचार्य शङ्कर का शाङ्कर भाष्य ब्रह्मसूत्र का प्रामाणिक भाष्य माना

जाता है। अद्वैत वेदान्त का उद्घोष है **"ब्रह्म सत्यं , जगन्मिथ्या।"** यह सम्पूर्ण विश्व माया का आरोपण (Projection) है। सत्य (सत्) पदार्थ , मात्र ब्रह्म ही है। इसलिए हमें " ***अहं ब्रह्मा ऽस्मि"*** आदि श्रुतिवाक्यों का श्रवण , मनन , निदिध्यासन करके मोक्ष प्राप्त करना चाहिए।

सांख्य दर्शन

सांख्य दर्शन को यदि योग का अविभाज्य अंग कहें तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। यह योग का सैद्धान्तिक (theoretical) पक्ष प्रतिपादित करता है। प्रकृति - पुरुष संयोग को भली - भाँति समझकर विवेकज्ञान द्वाराउससे निवृत्तहोकर व्यक्ति कैवल्य प्राप्त करसकता है। सांख्य पद का अर्थ है ***"सम्यक् ख्याति"*** अर्थात् सत्य ज्ञान (कई लोग इसका अर्थ संख्या के आधार पर भी करते हैं)। पुरुष तत्त्वतथाप्रकृति तत्त्वसाङ्ख्य दर्शन के मूल तत्त्व हैं।इनका तथा इनके साथ महत् , अहङ्कार , मन, पंच ज्ञानेन्द्रियों , पंच कर्मेन्द्रियों , पंच महाभूतों , पंच तन्मात्रादि 23 विकृतियों की कार्यप्रणाली तथा स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करकेव्यक्ति कैवल्य को प्राप्त हो सकता है।

योग दर्शन

योग भारत के प्राचीनतम दर्शनों में से एक है। चार पादों में विभक्त योगदर्शन इसका प्रमुख ग्रन्थ है जिसके रचयितामहर्षि पतञ्जलि हैं। इसे राजयोग का प्रमुख प्रस्थान ग्रन्थ माना जाता है। इसमें चित्तवृत्तियों के निरोध के द्वारा समाधिस्थ अवस्था को प्राप्त करने का व्यवहारिक मार्गदर्शन किया गया है।

योगदर्शन की विशिष्टता

यद्यपि सभी दर्शन अपने आप में अद्भुत हैं तथापि थोडा ध्यानपूर्वक देखने पर एक सामान्य अध्येता भी इस तथ्य का अनुभव करता है कि योगदर्शन का स्थान इनमें अप्रतिम है। पूरा भारतीय साहित्य योग की महिमा से भरा हुआ है। योग का इतिहास पातञ्जल योगदर्शन से बहुत पुराना है। प्राचीनतम वेदों से लेकर ब्राह्मण - ग्रन्थ , आरण्यक , उपनिषद् ग्रन्थ – सर्वत्र योगकी महिमा का गुणगान किया गया है। विश्व के प्राचिनतम ग्रन्थ वेदों की अथर्ववेद संहिता का उदाहरण लें --

योगं प्रपद्ये क्षेमं च क्षेमं प्रपद्ये योगं चनमोऽहोरात्राभ्यामस्तु ॥ 4

ऋषि कह रहे हैं किहे ईश्वर ! यह योग हमें रक्षा प्रदान करे तथा रक्षित होकर हम योग को प्राप्त करें। इस हेतु हम रात - दिन आपका स्मरण करते हैं। यहाँ ईश्वर प्रणिधान रूपी योग साधना का संकेत किया गया है। इसी प्रकार सामवेद में आया है --

स धा नो योग आभुवत् ॥5

अर्थात् समाधि दशा में परमात्मा का साक्षात्कार उपलब्ध होता है। वेदों की ही तरह स्मृतिग्रन्थों में भी योग का स्पष्ट वर्णन प्राप्त होता है --

इज्याचारदमाहिंसादानस्वाध्यायकर्मणाम्।
अयं तु परमो धर्मो यद् योगेनात्मदर्शनम् ॥6

अर्थात् यज्ञ , आचार , दम , अहिंसा , दान , स्वाध्यायतथाकर्मों में योग के द्वारा आत्मदर्शन करना ही सबसे बडा धर्म है।

इसी प्रकार उपनिषद् साहित्य योगविद्या के वर्णन से भरापडा है। आचार्य बलदेव उपाध्याय इस पर विशेष प्रकाशडालतेहैं 7- " उपनिषद् साहित्य में २१ उपनिषद् ऐसे हैं जिनमें योग का सर्वांगीण विवेचन है -

(१) अद्वयतारक	(२) अमृतनाद	(३) अमृतबिन्दु
(४) क्षुरिका	(५) तेजोबिन्दुउप०	(६) त्रिशिखि ब्राह्मण
(७) दर्शन	(८) ध्यानबिन्दु उप०	(९) नादबिन्दुउप०
(१०) पाशुपतब्रह्म	(११) ब्रह्मविद्या	(१२) मण्डलब्राह्मण
(१३) महावाक्य	(१४) योगकुण्ड्ली	(१५) योगचूडामणिउप०
(१६) योगतत्त्व	(१७) योगशिखा	(१८) वराह
(१९) शाण्डिल्य	(२०) हंस	(२१) योगराज

इन उपनिषदों में योग के समस्त आसन , प्राणायाम , प्रत्याहार , मुद्रा , नादानुसन्धान आदि विषयों का तात्त्विक विवेचन है।" यह तो रही वैदिक साहित्य की बात ,यदि लौकिक साहित्य परम्परा को भी देखें तो वहाँ भी यही स्थिति है।महाकवि कालिदास संस्कृत साहित्य के सबसे उज्ज्वल नक्षत्र हैं। उनके द्वारा रचित संस्कृत के प्रथम श्रेण्य महाकाव्य(Classical Epic) रघुवंशमहाकाव्यम् के प्रथम सर्ग में रघुवंशी राजाओं के आचार का वर्णन किया गया है।रघुवंशी राजा योगमार्ग से समाधि द्वारा सहस्रार चक्र का भेदन करके प्राणोत्सर्ग करते थे --

शैशवेऽभ्यस्त विद्यानां यौवने विषयैषिणाम्।
वार्धके मुनिवृत्तीनाम् योगेनान्ते तनुत्यजाम्॥8

वस्तुतः योग में एक ऐसी विशेषता है जो उसे अन्य सभी दर्शनों से भिन्न कर देती है। वह है योग की व्यावहारिक उपयोगिता (Practical Usage)।जहां अन्य दर्शन मात्र तत्त्वादि का सैद्धान्तिक विवेचन करते हैं वहीं योग यम , नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यानतथासमाधि-इस प्रकार एक सम्पूर्ण अनुशासन (Discipline), यापाठ्यक्रम (curriculum) का प्रतिपादन कर्ता है ।ज्ञान को जीवन में उतारने की तकनीकें इसमें निर्दिष्ट हैं ।योग भारतीय दर्शनविद्या का व्यवहारशास्त्र है । **यह करत की विद्या है** ।न्याय तथा वैशेषिक चाहे कितनी भी सूक्ष्मता से तर्क-वितर्क के आधार पर तत्त्वों का सैद्धान्तिक विवेचन कर लें परन्तु जीवन में परिवर्तन तो तभी घटित होगा जब उस ज्ञान को क्रियात्मक आधार मिलेगा। इसीलिये न्याय-वैशेषिक जैसे वैज्ञानिक तथा तथ्यपरक दर्शन भी अपने अन्तिम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए यौगिक प्रणाली को स्वीकार करते हैं ।महर्षि गौतम अपने न्याय दर्शन में समाधि को तत्त्वज्ञान की प्राप्ति का उपाय बतलाते हैं---

समाधिविशेषाऽभ्यासात् ॥9

अर्थात् विशेष प्रकार की समाधि के अभ्यास से न्याय दर्शन में उपदिष्ट तत्त्वों का साक्षात्कार होता है । इसी प्रकार अद्वैत वेदान्त को लें । इसका मुख्य ग्रन्थ महर्षि व्यास रचित ब्रह्मसूत्र है ।आदिगुरु शङ्कराचार्य इस ग्रन्थ के विश्वप्रसिद्ध टीकाकार हैं ।वे अपने अकाट्य तर्कों द्वारा साङ्ख्यदर्शन के कुछ सिद्धान्तों पर कठोर प्रहार करते हैं । साङ्ख्य-योग को विद्वान् एक ही दर्शन मानते हैं --

साङ्ख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः ॥10

साङ्ख्यसिद्धान्तों का खण्डन करते हुए भी आचार्य शङ्कर योग को वेदमूलक मानते हुए उसे पूर्ण महत्त्व देते हैं। वे कहते हैं---

योगोप्यणिमाद्यैश्वर्यप्राप्तिफलः स्मर्यमाणो न शक्यते साहसमात्रेण प्रत्याख्यातुम् ।श्रुतिश्च योगमाहात्म्यं प्रख्यापयति ।11

अर्थात् योग सिद्धियाँ तथा ऐश्वर्य प्रदान करनेवाला है इसलिए इसका खण्डन करना उचित नहीं है। और तो और , योग का गुणगान वेद ने भी किया है ।जिस सीमा तक साङ्ख्य-योग वेदान्त के सिद्धान्तों का विरोध नहीं करते वहां तक शङ्कराचार्य उन्हें स्वीकार करते हैं ।

येन त्वंशेन न विरुद्ध्यते तेनेष्टमेव साङ्ख्ययोग स्मृत्योः सावकाशत्वम् ।12

जब अद्वैतवेदान्त जैसे परमोच्च दर्शन के सर्वोच्च आचार्य भी योग कि महिमा को स्वीकार करते हैं तो इसकी विशिष्टता सहज ही स्पष्ट हो जाती है । हमने पीछे उल्लेख किया साङ्ख्य योग का ही अविभाज्य अंश है

। किन्तु , ऐसा होने पर भी योग का महत्त्व अधिक है।ऐसा इसलिए क्योंकि साङ्ख्य भले ही सिद्धान्त पक्ष का अद्‌भुत निरूपण करता है पर उसका व्यवहार पक्ष अति न्यून है ।चित्तवृत्तिनिरोध द्वारा विवेकज्ञान करके कैवल्य प्राप्ति हेतु जिन साधनों की आवश्यकता पडती है उनका विस्तृत विवेचन योग ही करता है ।

इसीप्रकार एक अन्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ श्रीमद् भगवद्गीता है जिसका सम्मान विद्वान् एकमत से करते हैं। गीता विभिन्न मत- मतान्तर तथा विचारधाराओं में अपनी असाधारण कुशलता से सामञ्जस्य स्थापित करती है ।कर्मयोग के इस महान ग्रन्थ में योग सर्वत्र छाया हुआ है ।गीता के सभी 18 अध्यायों का नामकरण योग पर आधारित है जैसे साङ्ख्ययोग , कर्मयोग , ज्ञानविज्ञानयोग आदि। छठे अध्याय आत्मसंयमयोग में विस्तार से योग तथा योगविधि की चर्चा 47 श्लोकों में की गई है ।यहाँ श्रीकृष्ण योगी को तपस्वी से , ज्ञानी से तथा कर्मयुक्त नर से भी श्रेष्ठ बतलाते हैं ।

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः ।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥ 13

श्री जयदयाल गोयन्दका जी ने गीता में योग , योगी तथा युक्त शब्दों के विभिन्न अर्थ बडी सूक्ष्मता के साथ दिखलाए हैं। **14.** इसी प्रकार श्रीमद्भागवद् महापुराण , योगवासिष्ठ आदि प्रसिद्ध ग्रन्थों में भी योग की महिमा का स्थान -स्थान पर गुणगान किया गया है ।

सभी दर्शनों का अन्तिम लक्ष्य मोक्षप्राप्ति अथवा आत्मसाक्षात्कार ही है जिसके हेतु यौगिक प्रणाली की उपयोगिता अनुभवसिद्ध है ।अन्य दर्शनों में जहां बन्ध के कारणों तथा मोक्षादि के उपायों का वर्णन मात्र है वहीं योग में इसकी विधियाँ भी विस्तार सहित बतलाई गई हैं ।साधक के सामर्थ्य के अनुसार प्रारम्भिक , मध्यस्तरीय तथा उच्चस्तरीय तकनीकों का विस्तृत विवेचन विभिन्न योग ग्रन्थों में किया गया है । उच्चकोटि के साधकों के लाभ हेतु जहाँ अष्टाङ्ग योग का वर्णन किया गया है वहीं सामान्य साधकों के लिये क्रियायोग दिया गया है जिसमें तप , स्वाध्याय तथा ईश्वर प्रणिधान के द्वारा क्लेशों का नाश तथा समाधि का भाव उत्पन्न होता है

तपः स्वाध्यायेश्वप्रणिधानानि क्रियायोग ।
समाधिभावनार्थः क्लेशतनुकरणार्थश्च । 15

इसी प्रकर प्राणायाम द्वारा– **प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य ॥16**

अभ्यास वैराग्य पूर्वक वृत्तिनाश द्वारा – **अभ्यासवैराग्याभ्याम् तन्निरोधः ॥17**

मन्त्रजप द्वाराअथवा ईश्वरके प्रति पूर्ण समर्पण द्वारा – **तज्जपस्तदर्थभावनम्॥18** भी व्यक्ति समाधिलाभ प्राप्त कर सकता है ।

अष्टाङ्गयोग का विवेचन अद्भुत है। इसमें बडी सूक्ष्मता के साथ समाधि प्राप्त करने के लिए आठ अङ्गों का निर्धारण किया गया है –

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहार धारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि ॥19

इनमें प्रथम 5 बहिरंग तथा अगले 3 अन्तरंग कहलाते हैं। इनमें शरीर से लेकर मन को नियन्त्रित करने के , आत्म अनुशासन से लेकर सामाजिक अनुशासन - सबकी विधियाँ स्पष्टतया निर्दिष्ट हैं। इसी प्रकार हठयोगप्रदीपिका ,घेरण्डसंहिता आदि हठयोग ग्रन्थों में भी प्रभावशाली विधियों का निर्देश किया गया है।इसी व्यावहारिक तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण के कारण योग की साधन प्रक्रिया का प्रयोग अन्य दर्शन भी करते हैं।

वस्तुतः योग अन्य सभी दर्शनों का सहायक दर्शन है।इससे किसी का विरोध नहीं है। योग स्वयं अपनी सार्वभौमिकता का संकेत करता है।देखिए , अष्टाङ्गयोग के 5 यमों का वर्णन करते हुए महर्षि पतञ्जलि क्या घोषणा करते हैं--

अहिंसासत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहाः यमाः॥
जातिदेशकालसमयानवच्छिन्नाःसार्वभौमाः महाव्रतम्॥20

अर्थात् अहिंसा,सत्य , अस्तेय,ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये 5 यम जाति देश, काल ,समयादि की सीमाओं से परे हैं।

अतःइस सारे सूक्ष्म विवेचन के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय दर्शनशास्त्र परम्परा में योग दर्शन का स्थान अति विशिष्ट तथा अतुलनीय है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. **ऋषि वात्स्यायन :**न्याय भाष्य (न्यायदर्शन) 1 / 1/ 1
2. **ऋषि वात्स्यायन :** न्याय भाष्य (न्यायदर्शन)1 /9 / 9
3. **ऋषि कणादः** वैशेषिक दर्शन1 / 1 / 2
4. **अथर्ववेद:**कां० 19 / अनु० 1/ सू० 8/ मं० 2
5. **सामवेद:**कां०2/अनु०3/सू०10/मं०3

6. **ऋषियाज्ञवल्क्य:** याज्ञवल्क्यस्मृति/आचाराध्याय / उपक्रम प्रकरण/श्लोक 8

7. **आ० बलदेव उपाध्याय:** भारतीय दर्शन/ तृतीय संस्करण 1948 / पृ० सं० 348 -349

8. **सी०आर०देवघर** /Works of Kalidasa/ V.Il /रघुवंशमहाकाव्यम् /प्र० सर्ग /श्लोक-8 /पृ०2/ Motilal Banarsidas/1993

9. **ऋषि गौतम:** न्याय दर्शन : 4/2/38

10. **स्वामी रामसुखदास** /श्रीमद्भगवद्गीता : 5/4/पृ०115/गीताप्रबोधिनी/गीताप्रेस गोरखपुर सम्वत्2071

11. **पं०श्रीचण्डीप्रसाद शुक्ल, पं०श्रीकृष्णपन्त शास्त्री**/ब्रह्मसूत्र (शाङ्कर भाष्य) 1/3/33/पृ०727/अच्युत ग्रन्थमाला काशी /संवत्०1993

12. **आदिगुरु शङ्कराचार्य**/The Works of Sri Shankaracharya (ब्रह्मसूत्रशाङ्कर भाष्य) 2/1/3/Sri Vani Vilas Edition /Vol.2/Sri Vani Vilas Press, Sri Rangam

13. **स्वामी रामसुखदास** /श्रीमद् भगवद्गीता (गीताप्रबोधिनी) अध्याय 6/ श्लोक 46 /पृ० 153गीताप्रेस गोरखपुरसम्वत्2071

14. **श्री जयदयाल गोयन्दका**/कल्याण (योगाङ्क) गीताप्रेस गोरखपुर/भाग 10 /अङ्क 1-2-3/ पृ० 594-5951992

15. **स्वामी सत्यानन्द सरस्वती**/मुक्ति के चार सोपान/योग पब्लिकेशन ट्रस्ट /मुंगेर /बिहार/ साधना पाद 2 / 1 –2/पृ०139-142 /संस्करण 2002

16. **स्वामी सत्यानन्द सरस्वती** /मुक्ति के चार सोपान/योग पब्लिकेशन ट्रस्ट /मुंगेर /बिहार/समाधिपाद 1 / 34/पृ० 98/संस्करण 2002

17. **स्वामी सत्यानन्द सरस्वती** /मुक्ति के चार सोपान/योग पब्लिकेशन ट्रस्ट /मुंगेर /बिहार/ समाधिपाद 1/12/पृ० 58 /संस्करण 2002

18. **स्वामी सत्यानन्द सरस्वती** /मुक्ति के चार सोपान/योग पब्लिकेशन ट्रस्ट /मुंगेर /बिहार/ समाधिपाद 1 / 28पृ० 85 /संस्करण 2002

19. **स्वामी सत्यानन्द सरस्वती** /मुक्ति के चार सोपान/योग पब्लिकेशन ट्रस्ट /मुंगेर /बिहार/ साधनपाद - 2 / 29पृ०185 /संस्करण 2002

20. **स्वामी सत्यानन्द सरस्वती** / मुक्ति के चार सोपान/योग पब्लिकेशन ट्रस्ट /मुंगेर /बिहार/साधनपाद/2/30--31/पृ०187-188 /संस्करण 2002

x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x*x